# उच्च शिक्षा की गुणवत्ता और प्रासंगिकता मुद्दे और उत्तरदायित्व

*निर्भय सिंह**

**उच्चतर शिक्षा को विकास की ऊँची दर और विकास के लाभ को जन-जन तक पहुँचाने का माध्यम मानते हुए यह लेख इसकी गुणवत्ता और प्रासंगिकता से जुड़े कुछ मुद्दों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है और इस बात पर ज़ोर देता है कि हमें इस क्षेत्र में गुणवत्ता लाने का हरसंभव प्रयत्न करना चाहिए।**

**शिक्षा विशेषकर उच्चतर शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जो भारत को विकास के उच्चतर मार्ग पर अग्रसर कर सकती है। यह एक ऐसा दायित्व है जो असँख्य, मूर्त तथा अमूर्त रूपों में विकास के विविध क्षेत्रों में हमारी सभी प्रतिबद्धताओं को लाभ पहुँचाता है। शिक्षा व विकास के बीच सीधा व सरल संबंध है। उच्चतर शिक्षा मानव पूँजी में वृद्धि करती है, जो विकास की ऊँची दर संभव बनाती है तथा विकास के लाभ जन-जन तक पहुँचाती है।**

प्रत्येक देश की शिक्षा व्यवस्था की विलक्षणताएँ, चुनौतियाँ एवं समस्याएँ होती हैं। भारत में उच्चतर शिक्षा में जिस प्रकार से सँख्यात्मक वृद्धि हुई उसी प्रकार से उसमें गुणात्मक ह्रास आता गया तथा यह गुणात्मक ह्रास ही उच्चतर शिक्षा व्यवस्था के गिरते स्तर का कारण बना। हम इसको सँख्यात्मक वृद्धि बनाम गुणवत्ता नहीं कहेंगे वरन् गुणवत्ता पूर्ण सर्व सुलभ एवं अभिगम्य शिक्षा व्यवस्था की रचना कहेंगे। क्या हमारी शिक्षा प्रणाली लोगों को नयी स्थितियों का सामना करने और कठिन दायित्वों को पूरा करने के लिए तैयार करती है? क्या यह विद्यार्थियों को चहुँमुखी व्यक्तित्व के विकास में मदद देती है? क्या यह उनका चरित्र-निर्माण करने, उन्हें सेवान्मुखी, सुविचारित, दयालु और सहिष्णु, और सभी प्रकार की मतांधता तथा पक्षपात से मुक्त बनाती है? क्या यह विद्यार्थियों को भार की बहुमूल्य बौद्धिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत के प्रति जागरूक बनाती है और उन्हें उस

*विभागाध्यक्ष, शिक्षा संकाय, बी.वी.एम. (पी.जी.)कॉलेज, बाह जनपद, आगरा.

पर गर्व करना सिखाती है? और साथ ही विश्व धरोहर में जो सर्वोत्कृष्ट है, उसे ग्रहण करने के लिए प्रेरित करती है? आज हमें उच्च शिक्षा की गुणवत्ता और प्रासंगिकता से जुड़े कुछ मुद्दों और उत्तरदायित्वों की ओर ध्यान आकृष्ट करना होगा जो निम्न हैं-

**गुणवत्तायुक्त शिक्षा तक पहुँच —** शिक्षा तक पहुँच का मूल्यांकन सिर्फ सँख्यात्मक संदर्भ में नहीं किया जा सकता। गुणवत्तापरक शिक्षा तक पहुँच भी उतनी ही ज़रूरी है जितनी कि शिक्षा तक पहुँच। मैं शिक्षा और विकास से संबद्ध कई विशेषज्ञों की इस राय से सहमत हूँ कि भारत में कालेज और विश्वविद्यालय शिक्षा की गुणवत्ता इसके मात्रात्मक विकास की गति के साथ सामंजस्य नहीं रख पाई है। प्रत्येक शैक्षिक वर्ष के प्रारंभ में यही देखने को मिलता है कि विद्यार्थी और उनके माता-पिता को अच्छे कॉलेजों में दाखिले के लिए कड़ा संघर्ष करना पड़ता है, जिनकी सँख्या बढ़ती माँग पूरी करने की दृष्टि से बहुत कम होती है।

स्वतंत्रता के बाद हमने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में काफी विस्तार किया है लेकिन इसके बाद भी विश्व के सर्वोत्कृष्ट 20 विश्वविद्यालयों में से एक भी भारत का नहीं है। आज़ादी के 60 साल बाद भी देश के विश्वविद्यालय जाने वाले आयु वर्ग की कुल जनसँख्या के 7 प्रतिशत छात्रों को ही उच्च शिक्षा में दाखिला मिल पाता है जिससे देश में उच्च शिक्षा का विस्तार न सिर्फ़ ठहर सा गया है वरन् उसका स्तर भी गिरता जा रहा है। उच्च शिक्षा से जुड़ी विभिन्न समस्याओं द्वारा बार-बार चेतावनी दी जाती रही है कि विश्वविद्यालयों और उच्च शैक्षणिक संस्थानों की सँख्या में बढोतरी नहीं की गई और उनकी गुणवत्ता में सुधार नहीं किया गया तो अर्थव्यवस्था की बढ़ती ज़रूरतों को पूरा करने के लिए देश में कुशल और प्रशिक्षित पेशेवरों की कमी हो जाएगी। हमें अपने विश्वविद्यालयों की ब्रैंड इमेज (छवि) में सुधार लाना चाहिए। अगर आज हमारे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (आई.आई.टी.) और प्रबंध संस्थानों (आई.आई. एम्स.) की विश्वभर में ब्रैंड वेल्यू यानी रचनात्मक पहचान कायम हुई है तो क्यों न हम देशभर के विश्वविद्यालयों और कॉलेजों के लिए ऐसी ही राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पहचान का दावा करें। किंतु, ऐसा करने के लिए हमें आई.आई.टी. और आई.आई.एम्स. की सफलता के लिए ज़िम्मेदार कारणों को भलीभाँति समझना होगा और उनसे प्राप्त अनुभवों का लाभ उठाना होगा। मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने क्षेत्रीय इंजीनियरिंग कॉलेजों को पूर्ण केंद्र वित्त-पोषित राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थानों का दर्जा देकर उचित फैसला किया है। इस दिशा में एक अन्य कदम हमारे विश्वविद्यालयों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और उद्योग के बीच एक भागीदारी विकसित करने, यानि भारत की अनुसंधान और विकास क्षमताओं में वृद्धि के लिए एक स्वर्ण त्रिभुज बनाने का होना चाहिए।

**उच्चतर शिक्षा तक पहुँच —** हमारे देश में कॉलेज और विश्वविद्यालय शिक्षा का ज़बरदस्त विस्तार हुआ है। आज़ादी के बाद कॉलेज और विश्वविद्यालय शिक्षा का लोकतंत्रीकरण करने में हमने काफी सफलता प्राप्त की है, जो आज ग्रामीण आबादी और अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और समाज के अन्य निम्नस्तरीय वर्गों के करीब आ गए हैं।

फिर भी हमारी यह कोशिश होनी चाहिए कि उच्चतर शिक्षा, खासकर व्यावसायिक शिक्षा का विस्तार उस स्तर तक किया जा सके, जितना विकसित देशों में है। दसवीं पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में इस मद पर ज़ोर दिया गया है और सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) की 8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर हासिल करने के लिए इसे अनिवार्य समझा गया है। उच्चतर उत्पादकता के ज़रिए उच्चतर विकास की दर का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए अनिवार्य है कि ज्ञान के आधार को समृद्ध बनाया जाए और हमारी जो कामकाजी आबादी है उसमें कुशल-श्रमिकों के प्रतिशत को बढ़ाया जाए।

**उच्चतर शिक्षा का निर्यात —** भारत में उच्चतर शिक्षा के निर्यात की संभावनाएँ हैं। मैंने हाल ही में अखबारों में पढ़ा था कि पिछले वर्ष भारत से लगभग 72000 विद्यार्थी अमेरीका के विश्वविद्यालयों में अध्ययन के लिए भेजे गए। इसके साथ ही भारत विदेश में अध्ययन के लिए सबसे अधिक विद्यार्थी भेजने वाले देश चीन से भी आगे निकल गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि उच्च शिक्षा के लिए इतने सारे विद्यार्थियों को विदेश भेजने में देश को भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है।

विद्यार्थियों को बाहर नहीं भेजा जाना चाहिए। विदेश में शिक्षा के लिए जाने वाले विद्यार्थी कई तरह से हमारे राष्ट्र-निर्माण में योगदान करते हैं। किंतु मैं जिस मुद्दे की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूँ वो यह है कि क्या हम विकासशील और विकसित देशों से बड़ी सँख्या में आने वाले उन विदेशी विद्यार्थियों के लिए भारत को एक आकर्षक लक्ष्य नहीं बना सकते - जो गुणवत्तायुक्त स्कूली, उच्च और व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने हमारे देश में आते हैं? इससे हमारे देश को असंख्य लाभ होंगे। सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि इस दिशा में व्यवस्थित प्रयासों से देश में उच्च शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाने में मदद मिलेगी, जिससे भारतीय विद्यार्थियों को लाभ होगा। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए सरकार को अपने कायदे-कानूनों में आवश्यक परिवर्तन करना होगा।

**प्रासंगिक, रोजगारोन्मुखी उच्च शिक्षा —** मैंने अनेक लोगों को यह कहते हुए सुना है कि कॉलेज और विश्वविद्यालय शिक्षा में बाहरी वातावरण की ज़रूरते पूरी करने और अवसरों का लाभ उठाने के लिए पर्याप्त लचीलापन और अनुकूलनशीलता नहीं है। उदाहरण के लिए इस तथ्य को देखिए कि भारत के सकल घरेलू उत्पाद में सेवाओं की भागीदारी निरंतर बढ़ रही है और आज यह करीब 50% हो चुकी है। आने वाले दो दशकों में लगभग 60-70% नौकरियाँ सेवा क्षेत्र में होंगी। मेरा मानना है कि हमारी उच्च शिक्षा प्रणाली इस ज़रूरत को पूरा करने के लिए समुचित रूप से तैयार नहीं है।

विश्वविद्यालयों को अपने तीन-वर्षीय बुनियादी डिग्री पाठ्यक्रम को अधिक लचीला बनाना चाहिए ताकि विद्यार्थियों को इस बात की छूट हो कि वे बुनियादी विषयों की ठोस जानकारी के साथ-साथ विभिन्न कौशलों में रोज़गारोन्मुखी प्रमाण-पत्र या डिप्लोमा पाठ्यक्रम कर सकें।

**उच्च शिक्षा की नीतियों की क्रियान्वयन —** स्वतंत्रोत्तर भारत में उच्च शिक्षा के परिवर्तन के उद्देश्य से अनेक आयोग व समितियाँ गठित हुईं। किंतु कोई भी समस्या के समाधान के लिए प्रभावी नहीं हुई। उच्च शिक्षा व्यवस्था में आई

विकृतियों के लिए शिक्षकों व विद्यार्थियों को ही विशेष दोष दिया जाता है तथा उसमें भी अध्यापकों द्वारा दायित्व निर्वहन न करने का मूल कारण कहा गया है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) देश के सभी विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के स्वरूप, विकास और सुधार के लिए गठित एकमात्र संस्था है तथा वही प्राध्यापकों की नियुक्तियों के लिए मानक तैयार करती है। उच्च शिक्षा की गुणवत्ता के गिरते स्तर की समस्याओं में प्रमुख समस्या यू.जी.सी. द्वारा सही नीतियाँ न बनाना तथा उनका क्रियान्वयन है। विश्वविद्यालयों में शैक्षिक वातावरण की आधारभूमि यू.जी.सी. अलग-अलग प्रांतों में की जा रही अवैधानिक मनमानी रोकने में विफल रही है।

**उच्च शिक्षा की गुणवत्ता का गिरता स्तर —** अयोग्य शिक्षकों की नियुक्ति पर रोक न लगने से समूचे देश की उच्च शिक्षा की स्थिति चिंतनीय हो गई है। भेद-भाव, वर्ग-भेद, और अनुशंसा के आधार पर पद प्राप्त कर रहे शिक्षक योग्य और परिश्रमी अध्येताओं का अवसर छीनने में लगे हैं। देश में आदर्श, निष्ठावान शिक्षकों ने जो त्याग का पथ दिखलाया वह आज विलुप्त है। उच्च शिक्षा के विकास में समाज सेवा की भावना में जाति, वर्ग, व भेद से दूर होकर किया गया कार्य ही जीवंत बनता है। विश्वगुरु के पद से विभूषित भारतीय शिक्षा ज्ञान चरित्र और संस्कृति जैसे तत्वों से संबंधित है। मैकाले की शिक्षा पद्धति आज भी हमारे जीवन मूल्यों को क्षीण करके हमें अपने मूल में ही भटका रही है। शिक्षा में राष्ट्रीय बोध के बिना देश का सर्वांगीण उत्थान, सामाजिक समरसता व अखंडता का विकास असंभव है।

बहुत से विद्यार्थियों के अनुभव इस ओर इशारा करते हैं कि विश्वविद्यालयों की चयन समितियों में सम्मिलित कतिपय विभागाध्यक्ष और संकाय सदस्य अभ्यार्थियों के शोध कार्यों को कई बार अपना नाम देकर फ़ायदा उठाते हैं और दूसरी ओर उस अभ्यार्थी के पद पर आने में बाधा डालते हैं। शोध तथा श्रम शून्य बन जाता है। निजी क्षेत्रों में स्थापित उच्च शिक्षा संस्थान भी कम ज़िम्मेवार नहीं है। इन शिक्षा संस्थानों में शिक्षकों की नियुक्तियाँ अब व्यावसायिक हो रही हैं। इसका मुख्य कारण शिक्षा का व्यवसायीकरण नहीं है बल्कि शिक्षा का व्यापारीकरण है। यहाँ पर कम वेतन में अयोग्य शिक्षकों का चयन प्राथमिकता पर होता है। इस प्रकार वर्तमान में शिक्षा की मौलिकता सही अर्थों में खो गई है। जब तक हम गुणवत्ता के लिए कोई सख्त कदम नहीं उठाते तब तक बाज़ारोन्मुख निजी शिक्षण संस्थाएँ शिक्षा का खुला व्यापार करती रहेगीं। दूसरी ओर सरकारी शिक्षण संस्थाएँ अराजकता और अव्यवस्था से घिरती रहेगीं।

**महंगी शिक्षा का भार —** जब दुनिया के तमाम देश उच्च शिक्षा — तकनीकी शिक्षा और शोध के क्षेत्र में अपना विश्वस्तरीय ढाँचा तैयार कर रहे हैं तब हम अपने देश की शिक्षा को दस गुना महँगी करने की योजना बना रहे हैं जो युवा मध्यम वर्ग के साथ खिलवाड़ है। धन के अभाव में प्रतिभाओं का हनन होता है। भारत अभी इतना सक्षम नहीं हुआ है कि वह महँगी शिक्षा का भार वहन कर सके। आने वाले ज्ञान का इस युग में उच्च शिक्षित विशाल मानव संसाधन हमारा हथियार बन सकता है और हम उसे ही थोथरा बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

**विद्यार्थियों की बढती सँख्या —** ज्ञान आयोग की **राष्ट्रीय ज्ञान आयोग भारत के प्रधानमंत्री की एक उच्चस्तरीय संस्था है जिसका उद्देश्य भारत को ज्ञानवान समाज बनाना है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का ध्यान शिक्षा से लेकर ई-प्रशासन तक ज्ञान तंत्र के पाँच प्रमुख क्षेत्रों पर केंद्रित है।*** कि महत्त्वपूर्ण सिफारिश यह है कि अगर 2015 तक देश में विश्वविद्यालय जाने वाले आयु वर्ग की कुल जनसँख्या के 15% विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा में दाखिला देने का लक्ष्य हासिल करना है तो विश्वविद्यालयों की कुल सँख्या 1500 तक ले जानी होगी जो वर्तमान में 350 के लगभग है। इसका अर्थ यह हुआ कि अगले वर्षों में विश्वविद्यालयों की सँख्या में चार गुना वृद्धि करनी होगी जो इतना आसान नहीं है क्योंकि उच्च शिक्षा पर जी.डी.पी. का 1.52% खर्च करने का लक्ष्य 10वीं पंचवर्षीय योजना में रखा गया, जो नये विश्वविद्यालयों के खोलने में बाधा है। 11वीं पंचवर्षीय योजना में 2.5 लाख करोड़ रूपये खर्च करने का प्रावधान किया गया है जिसमें 30 नये केंद्रीय विश्वविद्यालय, 370 महाविद्यालय, 08 आई.आई.टी., 05 राष्ट्रीय स्तर के विज्ञान संस्थान हैं।

**परीक्षा प्रणाली —** उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने हेतु हमें शिक्षक को उसकी वास्तविक भूमिका में लौटाना होगा तथा वर्तमान परीक्षा प्रणाली पर भी पुनर्विचार करना होगा। हमें ऐसी मूल्यांकन पद्धति ही अपनानी होगी जो विद्यार्थी का सही मूल्याँकन कर सके। इसके लिए सेशनल मूल्यांकन पद्धति ही सही मूल्यांकन कर सकती है। अध्यापकों को निष्पक्ष होकर ही इस पद्धति को अपनाना होगा। इसके अलावा विद्यार्थी के शैक्षिक स्तर का ही नहीं सह-शैक्षिक प्रवृत्तियों का भी मूल्यांकन आवश्यक है। आजकल जो परीक्षा हो रही है उसमें केवल विद्यार्थी की स्मरण शक्ति का ही परीक्षण होता है।

**शिक्षा में सुधार —** अंतिम उपाय जिस ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहूँगा वह है शिक्षा में सुधार की तत्काल आवश्कता। इसमें अनेक कार्य शमिल हैं, जिनमें से कुछ की ओर मैं पहले ही इशारा कर चुका हूँ। फिर भी मैं अतिरिक्त कार्यों की ओर ध्यान दिलाना चाहूँगा।

- सबसे पहले उच्च शिक्षा में फ़ीस के ढाँचे का मुद्दा है जो गैर व्यावसायिक विषयों में बहुत कम है। केंद्र और राज्य सरकारें उन विद्यार्थियों को भी उच्च शिक्षा में सब्सिडी दे रही हैं, जिनका प्राइवेट टयूशन खर्च और जेब खर्च कॉलेज फ़ीस से कई गुना अधिक है। इतना ज़रूर है कि उच्च और व्यवसायी शिक्षा गरीब और ज़रूरतमंदों की पहुँच में होनी चाहिए और उसकी लागत वहन करने के लिए उन्हें मुख्य रूप से "योग्यता एवं आय" पर आधारित छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए। शिक्षा के लिए ऋणों के दायरे का भी तेजी से विस्तार किया जाना चाहिए। किंतु अगर हम उनसे जो महंगी शिक्षा ग्रहण करने की क्षमता रखते हैं, से शिक्षा का उचित मूल्य नहीं लेंगे, तो हम वंचितों को व्यापक रूप में शिक्षा कैसे उपलब्ध करा पाएँगे?

*राष्ट्र के नाम प्रतिवेदन 2007, भारत सरकार.

- शैक्षिक संस्थानों के प्रबंध में भी तत्काल सुधारों की आवश्यकता है। आमतौर पर हमारे कुलपतियों, सीनेट सदस्यों, कॉलेज के प्राचार्यों को अपना कीमती समय और ऊर्जा रोज़मर्रा के गैर-ज़रूरी कार्यों में ही खर्च करनी पड़ती है न कि ऐसे कार्यों पर जिनसे बेहतर शैक्षिक नतीजे प्राप्त किए जा सकें। ऐसा आंशिक रूप से नौकरशाही को महत्त्व देने तथा सरकारी विभागों की उत्कृष्टता-विरोधी संस्कृति अपनाने के कारण होता है। इसके लिए हमें विदेशों में अपनाई जा रही प्रबंध की सर्वोत्कृष्ट सराहनीय पद्धतियों से सबक लेना चाहिए।
- प्रबंध संबंधी के कुछ अन्य मुद्दे भी हैं। गुणवत्तायुक्त शिक्षा अधिक संसाधनों और बेहतर सुविधाओं मात्र से संभव नहीं है। यह शिक्षकों और छात्रों के दृष्टिकोण पर भी उतनी ही आधारित है। आज विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में व्याप्त अनुशासनहीनता एवं लापरवाही इसमें बाधा बनते जा रहे हैं। विश्वविद्यालय और कॉलेज आज राजनीति का अखाड़ा बन गए हैं। अत: इसे नियंत्रित करने के लिए सरकार का नियंत्रण होना चाहिए। अगर शिक्षक उद्देश्य और प्रतिबद्धता की भावना नहीं दर्शाएँगें तथा वे शैक्षिक उत्कृष्टता के लिए ऊँचे मानदंडों का निर्धारण और माँग नहीं करेंगे तो विद्यार्थियों से इससे भिन्न उम्मीद कैसे कर सकते हैं। अत: इस मुद्दे में शिक्षा से जुड़े सभी पक्षों का आत्ममंथन करने की आवश्यकता है।
- हाल में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने प्रधानमंत्री को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में जो रिपोर्ट सौंपी है उसमें इंगित है कि आज़ादी के साठ साल बाद भी देश में विश्वविद्यालय जाने वाले 7 प्रतिशत लोग ही उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं जिसका कारण है कि उच्च शिक्षा पर जी.डी.पी. का 1.52 प्रतिशत ही खर्च होने का लक्ष्य जो पूरा नहीं हो पा रहा है। वर्तमान में 0.34 प्रतिशत जी.डी.पी. ही सरकार खर्च कर रही है। अत: उच्च शिक्षा में सार्वजनिक निजी क्षेत्र की भागीदारी बनाने के अलावा जी.डी.पी. की पूरी मात्रा खर्च की जाए।
- विद्यार्थियों की बढ़ती सँख्या को नियंत्रित करने के लिए उच्च शिक्षा के क्षेत्र में ई-शिक्षा को महत्त्व देना चाहिए अत: इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू) को इस कार्य के लिए और विस्तृत करना चाहिए।
- किसी देश की उच्च शिक्षा की स्थिति को ही उसके भविष्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संकेत कहा जाता है। पं. जवाहर लाल नेहरू ने कहा था "हमारे विश्वविद्यालय ठीक रहेंगे तो राष्ट्र भी ठीक रहेगा" अत: इनमें शिक्षकों की चयन प्रक्रिया को इस प्रकार से व्यवस्थित किया जाए कि योग्य, कर्मठ, जुझारू, तार्किक क्षमतायुक्त शिक्षकों का चयन हो।
- शिक्षकों में दायित्व की पूर्ति हेतु भयमुक्त तनाव रहित वातावरण का निर्माण शिक्षकों के कार्य में आवश्यक हस्तक्षेप का अभाव अतिरिक्त कार्यों के बोझ को कम करना। इसके लिए सरकार एवं समाज को प्रयास करना चाहिए।
- जुझारू कर्मठ शिक्षकों हेतु अतिरिक्त पुरस्कार आदि की व्यवस्था, पद प्राप्ति का मानक

पारदर्शक व स्पष्ट हो ताकि उन्हें प्रेरणा मिले जो शिक्षकों को दायित्वों के निर्वाहन में बढावा दें।

- पाठ्यक्रम निर्धारित करने में जबतक योग्य और अध्यव्यवसायी प्राध्यापकों का वर्चस्व नहीं होगा तब तक उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार नहीं किया जा सकता। चूँकि योग्य शिक्षकों द्वारा ही योग्य छात्रों का निर्माण होता है अत: सारा दोष छात्रों को देना उचित नहीं।
- छात्रों की अनियंत्रित सँख्या के प्रवेश पर रोक लगानी चाहिए क्योंकि इससे शिक्षक व शिक्षार्थी का निकट संपर्क प्रभावित होता है। जो शिक्षार्थी के व्यक्तित्व विकास में बाधक है।

## निष्कर्ष

उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने हेतु हमारा उत्तरदायित्व है कि हमें शिक्षक को उसकी वास्तविक भूमिका में लौटाना पड़ेगा तथा छात्रों की बढ़ती सँख्या को देखते हुई हमें वर्तमान परीक्षा प्रणाली पर पुन: विचार करना होगा। यदि उच्च शिक्षक संस्थान एवं विश्वविद्यालय बौद्धिक संस्थानों के रूप में अपना अस्तित्व कायम रखना चाहते हैं तो उन्हें अपने आधारभूत लक्ष्य, शिक्षक-प्रशिक्षण, अध्यापन शोध, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, पारम्परिक शैक्षणिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहिए।

आज अनुशासनहीनता, राजनीतिक हस्तक्षेप, नीरस पाठ्यक्रम आदि अनेक ऐसे मुद्दे हैं जो शिक्षा जगत की गुणवत्ता के ह्रास का मुख्य कारण हैं। वर्तमान में शिक्षा की मौलिकता अर्थ की मौलिकता में ही खो गई है। विश्वविद्यालयों में पठन-पाठन संगोष्ठियाँ व्याख्यानमालाएँ, कार्यशालाएँ एवं पाठ्येत्तर गतिविधियों का समावेश किया जाए एवं शिक्षक नवीन पाठ्य सामग्री का प्रयोग कर उच्चस्तरीय विषय-वस्तु का अधिकतम ज्ञान प्राप्त कर गुणवत्ता पूर्ण उच्च शिक्षा के संवाहक बन सकें।